ईआईएच लिमिटेड बनाम नादिया ए विरजी

(सिविल अपील सं 4797-4799/2022)

1 अगस्त ,2022

[एम. आर. शाह और बी. वी. नागरत्ना, जे. जे.]

पश्चिम बंगाल परिसर किरायेदारी अधिनियम, 1997- एस.एस. 5 (8), 3(च) (i), 18- सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की प्रयोज्यता - Or.7, r.11- वाद की अस्वीकृति- संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 के - s. 106- किराए के रूप में नगरपालिका कर - अपीलकर्ता (मकान मालिक) और प्रतिवादी (किरायेदार) के बीच एक किरायेदारी समझौता निष्पादित किया गया था - हस्तांतरण अधिनियम के अधीन। किरायेदारी समझौते के तहत, किराया रु.10,000/- प्रति माह निर्धारित किया गया था-इसके अलावा, अधिभार और जल कर/शुल्क सहित करों का भुगतान करने की देयता भी किरायेदार पर थी, अपीलार्थी ने u/s 106 टी.पी.ए. के तहत नोटिस जारी करके किरायेदारी को समाप्त कर दिया। नोटिस की अवधि समाप्त होने पर, अपीलार्थी ने बेदखली का मुकदमा दायर किया- अपीलार्थी के अनुसार, चूंकि प्रतिवादी 1997 अधिनियम के अधिनियम को देखते हुए करों का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, कुल किराया रु. 10,000/- की अधिकतम सीमा से अधिक है-इसलिए, अधिनियम 1997 लागू नहीं होता है और इसलिए मकान मालिक ने टी. पी. अधिनियम के तहत नोटिस जारी करके किरायेदारी को समाप्त कर दिया- प्रत्यर्थी ने शिकायत की अस्वीकृति के लिए आवेदन दायर किया, अन्य बातों के साथ-साथ, इस आधार पर कि मुकदमा अधिनियम 1997 के प्रावधानों के लागू होने के कारणों से वर्जित था क्योंकि परिसर का किराया रु..10,000/- था और किरायेदारी वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए होने से छूट नहीं है- 3(च)(i) अधिनियम 1997-उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने उक्त आवेदन को स्वीकार कर लिया और शिकायत को खारिज कर दिया-उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने अपील को खारिज कर दिया-अपील पर, अभिनिर्धारित कियाः किरायेदारी समझौते के अनुसार, देय किराया रु.10,000/- प्रति माह और

नगरपालिका करों का भुगतान करने का दायित्व किरायेदार पर अलग होता है-केवल इसलिए कि संपत्ति कर और अधिभार का आधा भुगतान करने का दायित्व □. 230 कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980 के अनुसार किरायेदार पर होगा और किरायेदार परिसर के अधिभोगकर्ता के रूप में अपने हिस्से का नगर निगम कर के भुगतान करने के लिए □/□ 5(8) अधिनियम, 1997 के तहत बाध्य है और केवल इसलिए कि किरायेदार से देय कर की वसूली के उद्देश्य से, इस तरह के विभाजित कर को किराए के रूप में वसूल किया जा सकता है, ऐसा कर उस परिसर के किराए का हिस्सा नहीं बन सकता है जो किरायेदार है- किरायेदारी समझौते में उल्लिखित नियम और शर्तें पर विचार किया जाना आवश्यक है-देय मासिक किराया और देय रु. 10,000/- प्रति माह था, उच्च न्यायालय ने उचित रूप से निरीक्षण और अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम,1997 लागू होगा और इसलिए एस. 106 टी. पी. अधिनियम को लागू करके दायर किया गया दीवानी मुकदमा परोक्ष रूप से वर्जित है-उच्च न्यायालय के द्वारा शिकायत को सही ढंग से खारिज कर दिया गया था- कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980-एस. एस. 230,231.

अपीलों को खारिज करते हुए, यह न्यायालय-

अभिनिर्धारित: 1. इस न्यायालय के विचार के लिए जो संक्षिप्त प्रश्न पूछा गया है, वह यह है कि क्या अधिनियम 1980 की धारा 230 और अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत किरायेदार द्वारा देय और देय नगरपालिका कर के हिस्से को 'किराया' अभिव्यक्ति में शामिल किया जाएगा या दूसरे शब्दों में, किरायेदार द्वारा देय और देय नगरपालिका कर के हिस्से को किराए पर दिए गए परिसर के किराए का हिस्सा कहा जा सकता है? मकान मालिक की ओर से यह मामला है कि अधिनियम 1997 की धारा 5(8) के तहत, प्रत्येक किरायेदार कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980 के प्रावधानों के अनुसार परिसर के अधिभोगकर्ता के रूप में नगर निगम कर के अपने हिस्से का भुगतान करने के लिए बाध्य है और अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार, प्रत्येक किरायेदार को नगर निगम कर का 50 प्रतिशत भुगतान करना होगा और अधिनियम 1980 की धारा 231 के अनुसार यह किराया बकाया के रूप में वसूली योग्य होगा। [पैरा 5.1 और 6] [1020-सी-डी, जी-एच]

2. अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार, एक व्यक्ति मुख्य रूप से

किसी भी भूमि या भवन के संबंध में संपत्ति कर (पट्टेदार) का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी संपत्ति के अधिभोगकर्ता (पट्टेदार/किरायेदार) से संपत्ति कर की आधी राशि की वसूली कर सकता है। अधिनियम 1980 की धारा 231 में प्रावधान है कि मुख्य रूप से किसी भी भुगतान के लिए उत्तरदायी व्यक्ति संपत्ति कर संपत्ति के अधिभोगियों से अधिभार सहित समेकित दर की वसूली का हकदार है और उस उद्देश्य के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी व्यक्ति के पास समान अधिकार और उपचार होंगे। मानो ऐसी राशि उस व्यक्ति द्वारा उसे देय 'किराया' थी जिससे वह ऐसी राशि वसूलने का हकदार है। अधिनियम 1997 की धारा 5(8) किरायेदार पर अधिनियम 1980 के प्रावधानों के अनुसार परिसर के कब्जेदार के रूप में नगरपालिका कर के अपने हिस्से का भुगतान करने का दायित्व डालती है। केवल इसलिए कि संपत्ति कर और अधिभार का आधा भुगतान करने का दायित्व अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार किरायेदार पर होगा और अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत किरायेदार के परिसर के अधिभोगियों के रूप में नगरपालिका कर के अपने हिस्से का भुगतान करने के लिए बाध्य है और केवल इसलिए कि किरायेदार से देय कर की वसूली में, ऐसे विभाजित कर को किराए के रूप में वसूल किया जा सकता है, ऐसा विभाजित कर (संपत्ति कर और अधिभार की राशि का आधा) किराएदार परिसर के किराए का हिस्सा नहीं बन सकता है। उस उद्देश्य के लिए, किरायेदारी समझौते/पट्टा समझौते में उल्लिखित नियमों और शर्तों पर विचार किया जाना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, यदि किरायेदारी समझौते में यह प्रावधान किया गया है कि किरायेदार 'एक्स' राशि का भुगतान करेगा जिसमें कर शामिल होंगे, तो कर घटक किराए का हिस्सा कहा जा सकता है हालाँकि, यदि समझौते के तहत और/या अधिनियम 1980 की धारा 230 आर/डब्ल्यू अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत भी, किरायेदार अलग से या आधे कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है। कर की राशि जो अब सांविधिक रूप से भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, उसे किराए के बकाया के रूप में वसूल किया जा सकता है क्योंकि इस तरह के 'कर' को वसूली के उद्देश्य से 'किराया' माना जाना है। हालाँकि, इसे किराए का हिस्सा नहीं कहा जा सकता है। [पारस 7 और 8] [1022-डी-एफ; 1025-ए डी]

3. अब जहां तक अधिनियम 1997 की धारा 18 पर निर्भरता रखी जा रही है और यह निवेदन किया जा रहा है कि अधिनियम 1997 की धारा 18 के तहत किराया हर तीन साल में 5 प्रतिशत के संशोधन द्वारा स्वचालित रूप से बढ़ाया जाएगा और इसलिए संशोधन द्वारा वृद्धि दी जाएगी इसीलिए संशोधन द्वारा हर 3 साल में 5 प्रतिशत की वृद्धि

देने पर देय किराया रु10000/- प्रति माह से अधिक होगा, उपरोक्त तर्क में कोई सार नहीं है। अधिनियम 1997 की धारा 18, उस मामले में लागू होगी जहां अधिनियम 1997 की धारा 17 के तहत नियंत्रक द्वारा उचित किराया निर्धारित किया जाता है। यहाँ ऐसी बात नहीं है। इसलिए, अधिनियम 1997 की धारा 18 का मामले तथ्यों और परिस्थितियों पर बिल्कुल भी लागू नहीं होती है। उपरोक्त चर्चा और ऊपर बताए गए कारणों को ध्यान में रखते हुए और देय और देय मासिक किराया रु.10,000/- प्रति माह जिसे मासिक किराए के रूप में दस हजार रुपये से अधिक नहीं कहा जा सकता है, उच्च न्यायालय ने उचित रूप से कहा कहा है कि अधिनियम 1997 लागू होगा और इसलिए टी. पी. अधिनियम की धारा 106 को लागू करके दायर किया गया दीवानी मुकदमा निहित रूप से वर्जित है। इसलिए, उच्च न्यायालय ने आदेश 7 नियम 11 सी. पी. सी. के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए शिकायत को सही ढंग से खारिज कर दिया है। इस न्यायालय के हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है। तदनुसार, वर्तमान याचिकाएं खारिज की जाती हैं। [पारस 10 और 11] [1026-ए-डी] [2022] 6 एस. सी. आर.

पोपट और कोटेचा संपत्ति बनाम असीम कुमार डे (2018)

9 एस. सी. सी. 149 [2018] 9 एस. सी. आर. 518-लागू नहीं है।

कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी बनाम कलकत्ता नगर निगम (2003) 10 एससीसी 533: [2003] 2 पूरक एससीआर 915; अब्दुल कादर बनाम जी. डी. गोविंदराज(मृत) एलआरएस द्वारा (2002) 5 एससीसी 51: [2002] 3 एस. सी. आर. 460; कर्णानी प्रॉपर्टीज लिमिटेड बनाम ऑगस्टीन(मिस) AIR 1957 एससी 309: [1957] 0 एससीआर 20- संदर्भित

मामला कानून संदर्भ

[2003]2 पूरक एससीआर 915	संदर्भित किया	पैरा 3.1
[2018] 9 एससीआर 518	अप्रयोज्य रखा गया	पैरा 3.1
[2002] 3 एससीआर 460	संदर्भित किया गया है	पैरा 3.5

[एम. आर. शाह, जे.]

[1957] 0 एससीआर 20 संदर्भित किया गया है पैरा 3.5

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं 4797-4799 /2022. उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 25.06.2019 से कलकत्ता में 2017 के ए. पी. डी. सं. 265 में 2016 के जी. ए. सं. 1216 के साथ 2012 के सी. एस. 354 में 2013 के जी. ए. □□.218 के साथ।

राणा मुखर्जी, वरिष्ठ अधिवक्ता , सुश्री कंचन यादव, सुश्री सुरभी गुलेरिया □/□ विक्टर मोसेस एंड एसोसिएट्स के लिए, अधिवक्ता, अपीलार्थी के लिए।

सिद्धार्थ डेव, वरिष्ठ अधिवक्ता , सुश्री रंजीता रोहतगी, सुश्री सैमटेन डोमा, अधिवक्ता उत्तरदाता के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

एम. आर. शाह, जे.

1. विवादित फैसले से खेद और असंतुष्ट महसूस करना और कलकत्ता में उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा सिविल सूट सं. 354/2012 में A.P.D NO. 265/2017 के साथ G.A NO. 1216/2016 के साथ G.A NO. 218/2013 में पारित आदेश दिनांक 25.06.2019, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने उक्त अपील को खारिज कर दिया और आदेश 7 नियम 11 सीपीसी के तहत आवेदन की अनुमति देने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश (मूल पक्ष) द्वारा पारित आदेश दिनांक 22.3.2016 की पुष्टि की है, जो इस आधार पर वाद को खारिज कर देता है कि विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष मुकदमा पश्चिम बंगाल परिसर किरायेदारी अधिनियम 1997 के प्रावधानों के अनुसार अनुरक्षित नहीं होगा (इसके बाद 'अधिनियम 1997' के रूप में संदर्भित), मूल वादी-मकान मालिक ने वर्तमान अपीलों को प्राथमिकता दी है।

2. संक्षेप में वर्तमान अपीलों की ओर ले जाने वाले तथ्य इस प्रकार हैं - इसके अंतर्गतः

कि 6.5.1993 दिनांकित किरायेदारी समझौते द्वारा, अपीलकर्ता मूल वादी-मकान मालिक ने 1700 वर्ग फुट के शोरूम के संबंध में प्रतिवादी/प्रतिवादी को किरायेदार के रूप में शामिल किया। कोलकाता के एक प्रमुख स्थान के भूतल पर परिसर संख्या 15/2, जवाहरलाल नेहरू रोड, कोलकाता में होटल ओबेरॉय ग्रैंड का आर्केड है। किरायेदारी समझौते के तहत किराया रु.10,000/- प्रति माह तय किया गया था। किरायेदारी समझौते के तहत, अधिभार और जल कर/शुल्क सहित करों का भुगतान करने का दायित्व प्रत्यर्थी-किरायेदार पर था।

2.1 अपीलार्थी-मूल वादी-मकान मालिक ने संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 (इसके बाद 'टी. पी. अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 106 के तहत नोटिस जारी करके किरायेदारी को समाप्त कर दिया। नोटिस की अवधि समाप्त होने पर, अपीलकर्ता-मूल वादी-मकान मालिक ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश (मूल पक्ष) के समक्ष एक मुकदमा दायर किया जिसका सिविल शूट संख्या 354/2012 था, जिसमें प्रतिवादी-किरायेदार को किरायेदार परिसर से बेदखल करने की मांग की गई थी। अपीलार्थी-मूल वादी के अनुसार, कलकत्ता नगर निगम को देय कर का भुगतान करने का दायित्व प्रत्यर्थी-किरायेदार पर था और अधिनियम की धारा 5 (8) को ध्यान में रखते हुए 1997 आर/डब्ल्यू धारा 3 (एफ) के तहत, मासिक किराए और करों सहित किरायेदार द्वारा देय कुल किराया रुपये की अधिकतम सीमा रु.10,000/- वाणिज्यिक परिसरों के लिए अधिनियम 1997 की धारा 3 (च) (i) में निर्दिष्ट प्रति माह से अधिक होगा। इसलिए अधिनियम 1997 लागू नहीं होता है और इसलिए मूल वादी-मकान मालिक ने टी. पी. अधिनियम की धारा 106 के तहत नोटिस जारी करके किरायेदारी को समाप्त कर दिया। मूल वादी ने भी संक्षिप्त निर्णय के लिए प्रार्थना की |

2.2 मूल प्रतिवादी-किरायेदार ने वाद में उपस्थित होने के बाद आदेश 7 नियम 11 सी. पी. सी. के तहत विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष वाद को अस्वीकार करने के लिए एक आवेदन दायर किया, इस आधार पर कि वाद अधिनियम 1997 के प्रावधानों के लागू होने के कारणों से वर्जित था क्योंकि उक्त परिसर का किराया रु.10,000/- प्रति माह और वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए किरायेदारी को अधिनियम 1997 की धारा 3(च)(i) के तहत छूट नहीं दी गई है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने उक्त आवेदन को स्वीकार कर लिया और 22.03.2016 दिनांकित आदेश के माध्यम से शिकायत को यह मानते हुए खारिज कर दिया कि किरायेदार द्वारा देय किराया रु.10,000/- प्रति माह जो अधिनियम 1997 की

धारा 3(च)(i) में उल्लिखित अधिकतम सीमा से नीचे है और इसलिए अधिनियम 1997 लागू होता है और इसलिए टी. पी. अधिनियम की धारा 106 के तहत मुकदमा अधिनियम 1997 के प्रावधानों द्वारा निहित रूप से वर्जित है।

2.3 आदेश 7 नियम 11 सी. पी. सी. के तहत आवेदन को अनुमति देने में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए और यह मानते हुए कि अधिनियम 1997 लागू होगा और इसलिए टी. पी. अधिनियम की धारा 106 के तहत मुकदमा अधिनियम 1997 के प्रावधानों द्वारा निहित रूप से वर्जित है, अपीलकर्ता-मूल वादी-मकान मालिक ने उच्च न्यायालय की खंड पीठ के समक्ष अपील दायर की। विवादित निर्णय और आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश की पुष्टि करते हुए उक्त अपील को खारिज कर दिया है।

2.4 उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करना और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और आदेश की पुष्टि करना कि किरायेदार द्वारा देय किराया रु.10,000/- प्रति माह (नगरपालिका करों का भुगतान करने के दायित्व को छोड़कर) और इसलिए अधिनियम 1997 लागू होगा और इसलिए टी. पी. अधिनियम की धारा 106 के तहत मुकदमा निहित रूप से वर्जित होगा, मूल वादी-अपीलकर्ता-मकान मालिक ने वर्तमान अपीलों को प्राथमिकता दी है।

3. श्री राणा मुखर्जी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, मूल वादी-मकान मालिक और श्री सिद्धार्थ दवे विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रतिवादी-किरायेदार की ओर से पेश हुए हैं।

3.1 अधिनियम 1997 की धारा 3,5 (8) आर/डब्ल्यू धारा 230 & 231 कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980 (इसके बाद 'अधिनियम 1980' के रूप में संदर्भित) और कलकत्ता गुजराती शिक्षा सोसायटी v. कलकत्ता नगर निगम (2003) 10 एस. सी. सी. 533 (पैरा 45) और पोपत और कोटेचा v. असीम कुमार डे, (2018) 9 एस. सी. सी. 149, संपत्ति के मामले में बाद का निर्णय के मामले में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा करना। यह मूल वादी-मकान मालिक की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राणा मुखर्जी द्वारा जोरदार रूप से प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश

के साथ-साथ उच्च न्यायालय की खंड पीठ दोनों ने यह देखने और अभिनिर्धारित करने में गंभीर त्रुटि की है कि अधिनियम 1997 लागू होगा।

3.2 यह जोरदार रूप से प्रस्तुत किया जाता है कि अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के अनुसार, अधिनियम 1980 की धारा 230 और 331 के तहत और इस न्यायालय द्वारा कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में, 'किराया' अभिव्यक्ति में निगम को देय नगरपालिका कर शामिल है और वर्तमान मामले में किरायेदारी समझौते के तहत नगरपालिका कर का भुगतान करने का दायित्व किरायेदार पर है और अन्यथा भी अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार, कर दायित्व का पचास प्रतिशत किरायेदार पर होगा और उसी का भुगतान वैधानिक रूप से किया जाना है और उसी की वसूली की जा सकती है जैसे कि यह किराया है। कि अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत भी, कर का बकाया वसूल करने योग्य है जैसे कि यह 'किराया' का बकाया है, प्रत्येक किरायेदार को नगरपालिका कर के अपने हिस्से का भुगतान करना होगा और किराए में नगरपालिका कर तत्व शामिल होगा। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए चूंकि किरायेदार को अधिनियम 1997 की धारा 3(च) (i) के अनुसार दस हजार रुपये से अधिक (किराए के लिए दस हजार रुपये और नगर निगम को देय नगरपालिका कर) का भुगतान करना आवश्यक है, इसलिए अधिनियम 1997 लागू नहीं होगा।

3.3 हमें अधिनियम 1997 की धारा 45 पर ले जाते हुए, यह प्रस्तुत किया जाता है कि अधिनियम 1997 किरायेदारी समझौतों के संबंध में भी लागू होगा। अधिनियम 1997 से पहले उस समय किए गए समझौतों पर लागू होंगे जब पश्चिम बंगाल परिसर किरायेदारी अधिनियम 1956 (इसके बाद इसे अधिनियम 1956 के रूप में जाना जाएगा) लागू था। यह प्रस्तुत किया गया है कि अधिनियम 1997 की धारा 45 के अनुसार, अधिनियम 1956 के तहत सभी मुकदमे और अन्य कार्यवाही अधिनियम 1997 के प्रारंभ में लंबित हैं, विशेष रूप से बचाए गए हैं, लेकिन अधिनियम 1997 और अधिनियम 1997 से पहले निष्पादित किरायेदारी समझौते को नहीं बचाया जाएगा। उस समय निष्पादित समझौतों पर लागू होता है जब अधिनियम 1956 लागू था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि अधिनियम 1997 की धारा 18 के अनुसार, हर तीन साल में पांच प्रतिशत के संशोधन द्वारा किराए में स्वतः वृद्धि होगी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए देय किराया रु. 10,000/- प्रति माह (अधिनियम 1997 की धारा 18 के अनुसार वृद्धि पर विचार करने के बाद) से अधिक होगा और इसलिए भी अधिनियम 1997 लागू नहीं होगा।

3.4 श्री राणा मुखर्जी,विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता मूल वादी की ओर से पेश हुए - मकान मालिक ने कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय का निर्णय पर बहुत अधिक भरोसा किया है, विशेष रूप से पैरा 45, उनके इस निवेदन के समर्थन में कि किरायेदार द्वारा देय किराए में किरायेदार द्वारा देय नगर निगम को देय कर शामिल होंगे। उपरोक्त निर्णय के आधार पर, यह प्रस्तुत किया जाता है कि कर भी किराए का एक हिस्सा है और इसलिए यदि इसे शामिल किया जाता है तो देय किराया रु. 10,000 / - से अधिक होगा और इसलिए अधिनियम 1997 की धारा 3 (च) (i) लागू होगी और इसलिए अधिनियम 1997 लागू नहीं होगा। यह प्रस्तुत किया गया है कि उक्त निर्णय का बाद में इस न्यायालय द्वारा पोपट और कोटेचा संपत्ति (सुप्रा) के मामले में पालन किया गया है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि पोपट और कोटेचा संपत्ति (सुप्रा) के मामले में, इस न्यायालय ने भी यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया है कि अधिनियम 1980 की धारा 230 के तहत किरायेदार द्वारा देय और देय कर का भुगतान न करने के लिए अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत और जैसा कि कर को किराया कहा जा सकता है और यहां तक कि कर का भुगतान न करने के लिए बेदखली डिक्री भी पारित की जा सकती है।

3.5 विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राणा मुखर्जी ने भी इस न्यायालय के एक अन्य निर्णय अब्दुल कादर बनाम जी. डी. गोविंदराज (मृत) एलआरएस द्वारा (2002) 5 एससीसी 51 के मामले में पर भरोसा किया है और प्रस्तुत किया है कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा देखा और अभिनिर्धारित किया गया है, कर्णानी प्रॉपर्टीज लिमिटेड बनाम ऑगस्टीन (मिस), ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 309 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर विचार करने के बाद कि करों की स्थिति में सहमत होने के लिए किरायेदार द्वारा भुगतान किया गया, वही किराया का हिस्सा है।

3.6 उपरोक्त प्रस्तुतियाँ करते हुए और उपरोक्त निर्णयों पर भरोसा करते हुए, यह प्रार्थना की जाती है कि वर्तमान अपील को अनुमति दी जाए और उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश और खंड पीठ द्वारा पारित आदेशों को रद्द करते हुए इस दृष्टिकोण से की अधिनियम 1997 लागू होगा ।

4. वर्तमान अपील का विरोध करते हुए, प्रत्यर्थी-किरायेदार की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ दवे ने कहा है कि दृढ़तापूर्वक प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में किरायेदारी समझौते के अनुसार, किरायेदार द्वारा देय और देय किराया

रु.10,000/- प्रति माह होगा। यह प्रस्तुत किया जाता है कि, अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार और/या अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के अनुसार भी, कर देयता का पचास प्रतिशत किरायेदार पर होगा और इसका भुगतान न करने पर मकान मालिक अधिनियम 1980 की धारा 231 के अनुसार किराए के बकाया के रूप में कर देयता की वसूली कर सकता है, लेकिन अधिनियम 1980 की धारा 230 के तहत देय और देय कर की राशि को अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत इसे किराया नहीं कहा जा सकता जैसा कि मकान मालिक की ओर से प्रचारित करने की मांग की गई है। यह प्रस्तुत किया गया है कि कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में इस अदालत के फैसले के अनुसार, जो देखा गया है वह किराए के बकाया के रूप में देय करों की वसूली का तरीका है। उन्होंने कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) मामले में उक्त निर्णय के पैरा 46 पर भी भरोसा किया है। यह तर्क दिया गया है कि इसलिए कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में इस अदालत के फैसले से यह नहीं माना जा सकता है कि कर राशि को किराया कहा जा सकता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि "किराया" शब्द परिभाषित नहीं है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि दोनों घटक, अर्थात् किराया और कर अलग-अलग हैं | कि किरायेदार द्वारा देय और देय कर राशि को "किराया" नहीं कहा जा सकता है। हालांकि, किरायेदार द्वारा देय और देय कर को किराए के बकाया के रूप में वसूल किया जा सकता है, लेकिन इसे "किराया" नहीं कहा जा सकता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इसलिए वर्तमान मामले में देय किराया और देय रुपये 10,000/- प्रति माह है और परिसर एक वाणिज्यिक परिसर है, अधिनियम 1997 की धारा 3 (च) (i) लागू नहीं होगी और अधिनियम 1997 लागू होगा।

4.1 यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान मामले में यह न केवल टीपी अधिनियम की धारा 106 के तहत मुकदमे पर विचार करने के लिए अदालत के अधिकार क्षेत्र का सवाल है, बल्कि सवाल सुरक्षा के संबंध में है जो अधिनियम 1997 केप्रावधानों के तहत किरायेदार को उपलब्ध हो सकता है। यह आग्रह किया जाता है कि अधिनियम 1997 के तहत, मकान मालिक कब्जे की वसूली कर सकता है और बहुत सीमित आधारों पर किरायेदार को बेदखल कर सकता है और अधिनियम 1997 के तहत संरक्षण किरायेदार को टीपी अधिनियम की धारा 106 के तहत बेदखली के मुकदमे में उपलब्ध नहीं होगा।

4.2 अब जहाँ तक पोपट और कोटेचा संपत्ति (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर दी गई निर्भरता, इस पर निर्भर थी की मकान मालिक की ओर से उपस्थित विद्वान वकील द्वारा, यह प्रस्तुत किया जाता है कि उक्त निर्णय में, निर्णय के पैरा 46 में कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) का मामला ध्यान नहीं दिया | विद्वान वकील ने हमें अधिनियम 1980 की धारा 230 में संशोधन और अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) को शामिल करने के उद्देश्यों और कारणों की ओर भी ले गए हैं, जिसके द्वारा निगम को देय नगरपालिका कर का भुगतान करने का दायित्व (कर दायित्व के 50 प्रतिशत की सीमा तक) अब किरायेदार पर होगा और इसलिए इसे किराए के बकाया के रूप में वसूली योग्य माना जाता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि एक निजी व्यक्ति होने के नाते, मकान मालिक के लिए किरायेदार से कर की वसूली के लिए मुकदमा दायर करना संभव नहीं था (अधिनियम 1980 की धारा 230 में संशोधन करने से पहले) और कई मामलों में यह देखा गया कि कर देयता किरायेदार द्वारा भुगतान किए जाने वाले किराए से अधिक होगी और इसलिए अधिनियम 1980 की धारा 230 में संशोधन किया गया जिसके तहत अब कर देयता का 50 प्रतिशत किरायेदार पर होगा और चूंकि मकान मालिक को वसूली के लिए कोई तंत्र उपलब्ध नहीं था, इसलिए अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) को जोड़ा गया है, जिसके तहत, मकान मालिक नगरपालिका कर के अपने हिस्से का भुगतान करने के लिए बाध्य है और जैसा कि कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा देखा और अभिनिर्धारित किया की किरायेदार से किराए के बकाया के रूप में वसूली योग्य है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि अधिनियम 1980 की धारा 211 अधिनियम 1997 की धारा आर/डब्ल्यू 5 (8) के तहत, यह केवल देय कर की वसूली का तरीका है और किरायेदार द्वारा किराए के बकाया के रूप में देय और किरायेदार/कर देयता द्वारा देय और देय कल्पना कर के बिना देय को किराया और/या किराए का हिस्सा कहा जा सकता है जब तक कि पार्टियों द्वारा अनुबंध के माध्यम से विशेष रूप से सहमति न दी जाए।

4.3 उपरोक्त प्रस्तुतियाँ करते हुए और उपरोक्त निर्णयों पर भरोसा करते हुए, वर्तमान अपीलों को खारिज करने का अनुरोध किया जाता है।

5. हमने मकान मालिक की तरफ से विद्वान अधिवक्ता के साथ-साथ किरायेदार को काफी समय तक सुनी।

5.1 इस न्यायालय के विचार के लिए जो संक्षिप्त प्रश्न पूछा गया है, वह यह है कि क्या अधिनियम 1980 की धारा 230 और अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत किरायेदार द्वारा देय और देय नगरपालिका कर के हिस्से को 'किराया' अभिव्यक्ति में शामिल किया जाएगा या दूसरे शब्दों में, किरायेदार द्वारा देय और देय नगरपालिका कर के हिस्से को किराए पर दिए गए परिसर के किराए का हिस्सा कहा जा सकता है?

5.2 शुरुआत में, यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि वर्तमान मामले में,

विचाराधीन किरायेदारी समझौते के तहत किरायेदार के द्वारा देय किराया रु 10,000 / - प्रति माह होगा | किराए के अलावा, किरायेदार कलकत्ता नगर निगम को देय नगरपालिका करों का भुगतान करने के लिए भी सहमत हो गया है। हालांकि, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि किरायेदारी समझौते में यह प्रावधान नहीं है कि पक्ष सहमत हुए हैं कि किराया देय नगरपालिका करों सहित होगा और जब भी इस तरह के करों में वृद्धि की जाएगी, किराया आनुपातिक रूप से बढ़ाया जाएगा। किरायेदारी समझौते के तहत, देय किराया रु 10,000 / प्रति माह और नगरपालिका करों का भुगतान करने का दायित्व किरायेदार पर अलग और विशिष्ट होता है। अधिनियम 1997 की धारा 3 (च) के निष्पक्ष अध्ययन पर, जिसमें यह प्रावधान है कि गैर-आवासीय उद्देश्य के लिए किराए पर दिया गया कोई भी परिसर, जिसमें मासिक किराए के रूप में दस हजार रुपये से अधिक है, पश्चिम बंगाल परिसर किरायेदारी अधिनियम, 1997 में निहित कुछ भी लागू नहीं होगा। प्रयुक्त शब्द "मासिक किराया" है। जैसा कि यहाँ ऊपर देखा गया है, "किराया" शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है।

6. मकान मालिक की ओर से यह मामला है कि अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत, प्रत्येक किरायेदार परिसर के अधिभोगियों के रूप में नगरपालिका कर के अपने हिस्से का भुगतान कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980 के प्रावधानों के अनुसार करने के लिए बाध्य है और अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार, नगर निगम कर का 50 प्रतिशत प्रत्येक किरायेदार को देना होगा और अधिनियम 1980 की धारा 231 के अनुसार इसे किराये के बकाया के रूप में वसूल किया जाएगा और कोलकाता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी के मामले में इस अदालत के फैसले के अनुसार नगरपालिका करों का बकाया किराए के बकाया के रूप में वसूल किया जा सकता है और इसलिए किरायेदार द्वारा देय नगरपालिका कर का हिस्सा किराए का हिस्सा होगा।

कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में पैरा 45 और पोपत और कोटेचा संपत्ति (सुप्रा) के मामले में बाद के निर्णय पर भारी निर्भरता रखी गई है।

7. मुद्दे पर विचार करते समय, अर्थात्, क्या किरायेदार द्वारा देय नगरपालिका कर का हिस्सा अधिनियम 1980 की धारा 230 और 231 के प्रावधानों को अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत अधिनियम 1997 की धारा 3 (च) के उद्देश्य के लिए किराए का एक हिस्सा कहा जा सकता है, अधिनियम 1980 की धारा 230 और 231 और अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) को संदर्भित करने की आवश्यकता है, जो नीचे दिए गए हैं:

" धारा 230: व्यक्ति द्वारा संपत्ति कर का विभाजन मुख्य रूप से भुगतान के लिए उत्तरदायी।

इस अधिनियम में अन्यथा प्रावधान के अलावा, किसी भी भूमि या भवन के संबंध में संपत्ति कर का भुगतान करने के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी व्यक्ति वसूली कर सकता है -

(क) यदि भूमि या भवन का केवल एक ही अधिभोगकर्ता है, तो ऐसे अधिभोगकर्ता से इस प्रकार भुगतान की गई दर का आधा हिस्सा वसूल कर सकता है, और यदि एक से अधिक अधिभोगकर्ता हैं, तो प्रत्येक अधिभोगकर्ता से ऐसी राशि का आधा हिस्सा वसूल कर सकता है जो मालिक द्वारा इस प्रकार भुगतान की गई पूरी राशि के बराबर है, जो भूमि या भवन के उस हिस्से के मूल्य के बराबर है जो ऐसे अधिभोगकर्ता के कब्जे में है और जो ऐसी भूमि या भवन के पूरे मूल्य के बराबर है

बशर्ते कि यदि एक से अधिक अधिभोगकर्ता हैं, तो राशि का आधा हिस्सा विभाजित किया जा सकता है और प्रत्येक अधिभोगकर्ता से इस अनुपात में वसूल किया जा सकता है कि उसके द्वारा कब्जा किए गए हिस्से का वार्षिक मूल्य वह ऐसी भूमि या भवन का कुल वार्षिक मूल्य वहन करता है;

(ख) किसी भी भूमि या भवन पर संपत्ति कर पर अधिभार की पूरी राशि ऐसी भूमि या भवन के अधिभोगियों से जो इसका उपयोग वाणिज्यिक या गैर-आवासीय उद्देश्य के लिए करता है।

बशर्ते कि यदि ऐसे एक से अधिक कब्जेदार हैं, तो संपत्ति कर पर अधिभारित राशि को विभाजित किया जा सकता है और ऐसे प्रत्येक कब्जे वाले से ऐसे अनुपात में वसूली की जा सकती है, जिस अनुपात में उसके कब्जे वाले हिस्से का वार्षिक मूल्य ऐसी भूमि या इमारतें के कुल वार्षिक मूल्य से मेल खाता हो। धारा 232: पुनर्प्राप्ति का तरीका: यदि कोई व्यक्ति किसी भूमि या भवन पर कोई संपत्ति कर का भुगतान करने के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी है और ऐसी भूमि या भवन के अधिभोगियों से कोई राशि वसूल करने का हकदार है, तो उसके पास, उसकी वसूली के लिए, वही अधिकार और उपाय होंगे जैसे कि ऐसी राशि उस व्यक्ति द्वारा उसे देय किराया थी जिससे वह ऐसी राशि की वसूली करने का हकदार है।

<u>पश्चिम बंगाल परिसर किरायेदारी अधिनियम 1997 की धारा 5 (8):</u>

(8) प्रत्येक किरायेदार कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980 (1980 का पश्चिम बंगाल अधिनियम LIX) या पश्चिम बंगाल नगर अधिनियम, 1993 (1993 का पश्चिम बंगाल अधिनियम XXII) के प्रावधानों के अनुसार परिसर के अधिभोगियों के रूप में नगर निगम कर के अपने हिस्से का भुगतान करेगा।

स्पष्टीकरण -इस उप-धारा के प्रयोजनों के लिए 'अधिभोगकर्ता' शब्द का अर्थ है अधिभोगकर्ता जिसे धारा 2 के खंड (6) कोलकाता नगर निगम अधिनियम, 1980 या पश्चिम बंगाल नगर निगम अधिनियम, 1993 की धारा 2 का खंड (43) में परिभाषित"

अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार, किसी भी भूमि या भवन के संबंध में संपत्ति कर (पट्टेदार) का भुगतान करने के लिए मुख्य रूप से संपत्ति पर कब्जा करने वाले अधिभोगी (पट्टेदार/किरायेदार) से संपत्ति कर की आधी राशि की वसूली करें। अधिनियम 1980 की धारा 231 में प्रावधान है कि किसी भी संपत्ति कर का भुगतान करने के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी व्यक्ति संपत्तियों के कब्जे वाले से अधिभार सहित समेकित दर वसूलने का हकदार है और उस उद्देश्य के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी व्यक्ति के पास समान अधिकार और उपचार होंगे। यह राशि उस व्यक्ति द्वारा उसे देय 'किराया' थी जिससे वह ऐसी राशि वसूल करने का हकदार है। अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) किरायेदार पर अधिनियम 1980 के प्रावधानों के अनुसार परिसर के अधिभोगकर्ता के रूप में नगरपालिका कर के अपने हिस्से का भुगतान करने का दायित्व डालती है।

8. कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में अधिनियम 1980 की धारा 230 और 331 इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आई। इस न्यायालय के समक्ष, अधिनियम 1980 के उपरोक्त दो प्रावधानों की वैधता को चुनौती दी गई थी। इस न्यायालय के पास अधिनियम 1980 की धारा 211 के उद्देश्य पर पैरा 45 में विचार करने का अवसर था, जो निम्नानुसार हैः

" 45. हम पाते हैं कि कर के मूल्यांकन और वसूली के लिए मशीनरी प्रावधानों में मूल रूप से मालिक या पट्टादाता शामिल होता है जो संपत्ति पर कर के लिए 'मुख्य रूप से उत्तरदायी' होता है, हालांकि मूल्यांकन और कर के हिस्से की वसूली के दौरान किरायेदार, उप-किरायेदार से या कब्जाधारियों, उनकी भागीदारी भी निर्देशित है। इसके साथ कर की वसूली की प्रक्रिया को सरल बनाने का उद्देश्य कि मालिक या पट्टेदार के खिलाफ "मुख्य रूप से उत्तरदायी व्यक्ति" के रूप में कार्रवाई की जाए। संपत्ति के मालिक या पट्टेदार को "मुख्य रूप से" किरायेदार, उप-किरायेदार या रहने वाले से वसूली के अधिकार के साथ कर की मांग को पूरा करने की आवश्यकता होती है। यदि मकान मालिक या मालिक अपने हिस्से और किरायेदार, उप-किरायेदार या रहने वाले के हिस्से सहित कर की पूरी राशि का भुगतान करने के लिए बाध्य है, तो मालिक या पट्टेदार को किरायेदार, उप-किरायेदार या रहने वाले द्वारा देय कर के हिस्से की वसूली करने की शक्ति प्रदान की जानी चाहिए, जो वास्तव में संपत्ति का उपभोग कर रहा है और इसे वाणिज्यिक या गैर-आवासीय उद्देश्यों के लिए उपयोग कर रहा है। विधायिका इस तथ्य पर ध्यान दिया गया है कि कलकत्ता के महानगरीय शहर में बड़ी संख्या में संपत्तियों पर किरायेदारों, उप-किरायेदारों या रहने वालों का कब्जा है, जो किराए या पट्टे की राशि की अपेक्षाकृत कम राशि पर हैं। ऐसी स्थिति में, कर का पूरा बोझ मालिक या पट्टेदार पर डालना, अन्यायी होगा, विशेष रूप से तब जब किरायेदारी कानून एक विशेष सीमा से अधिक किराए में वृद्धि की अनुमति नहीं देता है और मकान मालिक को बेदखल करने का अधिकार किरायेदारी अधिनियम के तहत आधार तक ही सीमित है। इसलिए, अधिनियम के विवादित प्रावधानों के अनुसार, विधायिका ने कर के बोझ को मालिक या पट्टेदार के बीच एक पक्ष के रूप में और किरायेदार, उप-किरायेदार या कब्जाधारक के बीच अन्य पक्षों के रूप में विभाजित करने के बारे में सोचा है। कर की पूरी राशि पट्टेदार से वसूल की जा सकती है और किराएदार या उप-किरायेदार से किराए की कुर्की के माध्यम से भी वसूल की जा सकती है। यदि पट्टेदार या मकान मालिक ने किरायेदार या उप-किरायेदार द्वारा देय कर के हिस्से सहित पूरे कर का भुगतान किया है, तो मकान

मालिक को खुद किरायेदार की ओर से उसके द्वारा भुगतान किए गए कर के हिस्से की वसूली द्वारा प्रतिपूर्ति को प्राप्त करने की शक्ति से लैस होना होगा।

इसलिए अधिनियम की धारा 231, एक कल्पना पैदा करती है कि किरायेदार पर विभाजित "कर" को "किराया" माना जाएगा और इस तरह से वसूली योग्य होगा। किरायेदारी कानून में "किराया" शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है और इस न्यायालय ने पुस्पा सेन गुप्ता बनाम सुस्मा घोष [(1990) 2 एस. सी. सी. 651] के मामले में इस कानूनी स्थिति पर ध्यान दिया है। जो पश्चिम बंगाल में लागू किरायेदारी अधिनियम के प्रावधानों से उत्पन्न हुआ। किराया एक व्यापक अभिव्यक्ति है जिसमें किराएदार परिसर पर लगाए जाने वाले पानी, बिजली और अन्य करों के लिए सेवा शुल्क के साथ पट्टे की राशि शामिल हो सकती है। कि इसके बाद, पैराग्राफ 46 में, यह निम्नानुसार मनाया और अभिनिर्धारित किया गया हैः

" 46. किरायेदारी अधिनियम के प्रावधान केवल मकान मालिक को किराए के बकाया की मांग करने में सक्षम बनाते हैं और मांग के बावजूद किराए का भुगतान न करने के आधार पर किराएदार पर किराए की वसूली या बेदखली के लिए मुकदमा करते हैं। किरायेदार को किराए के बकाया के आधार पर बेदखली के खिलाफ सुरक्षा तभी मिल सकती है जब वह किरायेदारी अधिनियम के प्रावधानों में निर्धारित तरीके से बकाया राशि को जमा करता है। काल्पनिक प्रावधान के रूप से "कर" को "किराया" के रूप में मानना आवश्यक है क्योंकि अधिनियम की धारा 231 में इस तरह की कल्पना के अभाव में, मकान मालिक को कर की पूरी राशि का भुगतान करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा जो अधिनियम के तहत उससे वसूली योग्य है और किरायेदार, उप-किरायेदार या रहने वाले की ओर से भुगतान किए गए ऐसे कर की वसूली के लिए दीवानी मुकदमा दायर करने के एक महंगे और बोझिल उपाय पर छोड़ दिया जाएगा। इस तरह की कल्पना को अधिनियम की धारा 231 के तहत शामिल करने की आवश्यकता है क्योंकि एक निजी पक्ष कर की वसूली नहीं कर सकता है। यदि कोई पट्टेदार किरायेदार पर लगाए जाने वाले कर के एक हिस्से का भुगतान करने के लिए बाध्य है, तो मकान मालिक उसे "कर" के रूप में नहीं बल्कि केवल "किराए" के हिस्से के रूप में वसूल कर सकता है। "कर" को "किराया" मानने के लिए धारा 231 में कानून द्वारा बनाई गई कल्पना को इसके तार्किक निष्कर्ष पर ले जाना होगा। विचाराधीन अधिनियम और किरायेदारी अधिनियम, दोनों राज्य विधान हैं।

विधायी अक्षमता का कोई सवाल ही नहीं उठता। दोनों अधिनियमों के बीच कोई अंतर-संघर्ष प्रतीत नहीं होता है। दोनों अधिनियमों में विधायी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए दोनों को सामंजस्यपूर्ण रूप से पढ़ना और लागू करना होगा। इसलिए अधिनियम की धारा 231 पर आधारित तर्क भी हमारे लिए स्वीकार्य नहीं है और खारिज कर दिया जाता है।

इस प्रकार, जैसा कि कलकत्ता गुजराती एजुकेशन सोसाइटी (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय द्वारा देखा और अभिनिर्धारित किया गया है, देय और देय कर की राशि अधिनियम 1980 की धारा 230 अधिनियम 1997 की धारा आर/डब्ल्यू 5 (8) के तहत किरायेदार द्वारा किराए के बकाया के रूप में वसूली की जा सकती है (अधिनियम 1980 की धारा 231) और उस उद्देश्य के लिए, अर्थात्, वसूली के उद्देश्य से किरायेदार पर विभाजित कर को 'किराया' माना जाएगा और इस तरह से वसूली योग्य होगा। उपरोक्त निर्णय को यह मानते हुए नहीं पढ़ा जा सकता है कि किरायेदार पर विभाजित कर को 'किराए का हिस्सा' माना जाए, जैसा कि मकान मालिक की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राणा मुखर्जी ने तर्क दिया था। केवल इसलिए कि संपत्ति कर और अधिभार का आधा भुगतान करने का दायित्व अधिनियम 1980 की धारा 230 के अनुसार किरायेदार पर होगा और किरायेदार अधिनियम 1997 की धारा 5 (8) के तहत परिसर के अधिभोगियों के रूप में नगरपालिका कर अपने हिस्से का भुगतान करने के लिए बाध्य है और केवल इसलिए कि किरायेदार से देय कर की वसूली के उद्देश्य से, ऐसे विभाजित कर को किराए के रूप में वसूल किया जा सकता है, जैसे कि कर विभाजित (संपत्ति कर और अधिभार की राशि का आधा) किराए पर लिए गए परिसर के किराए का हिस्सा नहीं बन सकता है। उस उद्देश्य के लिए, किरायेदारी समझौते/पट्टा समझौते में उल्लिखित नियमों और शर्तों पर विचार किया जाना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, यदि किरायेदारी समझौते में यह प्रावधान किया गया है कि किरायेदार 'एक्स' राशि का भुगतान करेगा जिसमें कर शामिल होंगे, तो कर घटक को किराए का हिस्सा कहा जा सकता है। हालाँकि, यदि समझौते के तहत और/या अधिनियम 1980 की धारा 230 अधिनियम 1997 की धारा आर/डब्ल्यू 5 (8) के तहत भी, किरायेदार अलग से कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है या कर की राशि का आधा अब वैधानिक रूप से भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, तो इसे किराए के बकाया के रूप में वसूल किया जा सकता है क्योंकि इस तरह के 'कर' को वसूली के उद्देश्य से 'किराया' माना जाना है। हालांकि, इसे किराए का हिस्सा नहीं कहा जा सकता है। सलिए, कोलकाता गुजराती एजुकेशन सोसायटी (सुप्रा) के मामले में मकान मालिक की ओर से पेश विद्वान वकील

द्वारा इस अदालत के फैसले पर भरोसा करना उक्त फैसले की गलत व्याख्या है। जैसा कि यहां ऊपर देखा गया है, उक्त निर्णय का यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता है कि विभाजित कर को किराए का हिस्सा कहा जा सकता है जैसा कि मकान मालिक की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री राणा मुखर्जी ने तर्क दिया था।

9. अब जहां तक पोपट और कोटेचा संपत्तियों (सुप्रा) के मामले में इस अदालत के बाद के फैसले पर निर्भरता का सवाल है, शुरुआत में, यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि उक्त निर्णय में, मामले में निर्णय के पैरा 45 कोलकाता गुजराती शिक्षा समाज (सुप्रा) पर विचार किया गया है न कि पैरा 46, जो यहां ऊपर प्रस्तुत किया गया है। तथ्यों पर भी उक्त निर्णय लागू नहीं होता है। उक्त निर्णय में, समझौते के तहत पक्षों ने सहमति व्यक्त की कि किराए में देय सभी नगरपालिका कर शामिल होंगे और जब भी इस तरह के करों में वृद्धि की जाएगी तो किराए को आनुपातिक रूप से बढ़ाया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में,किरायेदारी समझौते के तहत, देय किराया रु 10,000 / प्रति माह जिसमें देय नगरपालिका कर शामिल नहीं हैं। समझौते के तहत करों का भुगतान करने का दायित्व किराए की राशि, अर्थात रु. 10,000 / - प्रति माह इसके अलावा होगा । इसलिए तथ्यों के आधार पर पोपट और कोटेचा संपत्ति (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय का निर्णय लागू नहीं होता है।

10. अब जहाँ तक अधिनियम 1997 की धारा 18 पर निर्भरता रखी जा रही है और यह प्रस्तुत किया जा रहा है कि अधिनियम 1997 की धारा 18 के तहत हर तीन साल में 5 प्रतिशत के संशोधन से किराया अपने आप बढ़ जाएगा और इसलिए हर तीन साल में 5 प्रतिशत के संशोधन द्वारा वृद्धि देने से, देय किराया प्रति माह दस हजार रुपये से अधिक होगा, उपरोक्त तर्क में कोई सार नहीं है। अधिनियम 1997 की धारा 18 उस मामले में लागू होगी जहां अधिनियम 1997 की धारा 17 के तहत नियंत्रक द्वारा उचित किराया निर्धारित किया जाता है। यहाँ ऐसी बात नहीं है। इसलिए, अधिनियम 1997 की धारा 18 मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर बिल्कुल भी लागू नहीं होती है।

11. उपरोक्त चर्चा और ऊपर बताए गए कारणों को ध्यान में रखते हुए और देय और देय मासिक किराए के रूप में रु. 10,000 / - प्रति माह जिसे मासिक किराए के रूप में दस हजार रुपये से अधिक नहीं कहा जा सकता है, उच्च न्यायालय ने सही अवलोकन और अभिनिर्धारित किया है कि अधिनियम 1997 लागू होगा और इसलिए टी. पी. अधिनियम की धारा 106 को लागू करके दायर किया गया दीवानी मुकदमा निहित रूप

से वर्जित है। इसलिए, उच्च न्यायालय ने आदेश 7 नियम 11 सी. पी. सी. के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए शिकायत को सही ढंग से खारिज कर दिया है। इस न्यायालय के हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है। तदनुसार, वर्तमान याचिकाएं खारिज की जाती हैं।

हालांकि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

याचिकाएं खारिज कर दी गईं।

अंकित ज्ञान

अनुवादित-

श्री संजय कुमार चंधारियावी,

प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश गुमला |